अपीलेट सिविल

समक्ष चीफ जस्टिस हरबंस सिंह और जस्टिस प्रेम चंद जैन,

हरदियाल सिंह -याचिकाकर्ता

बनाम

हरियाणा राज्य, ई. टी. सी.-उत्तरदाता सिविल रिट नं. 1970 का 2232।

24 दिसंबर, 1970।

पंजाब सहकारी समिति अधिनियम (1954 का XIV)-धारा 50 और 60-पंजाब सहकारी समिति नियम (1956)-नियम 56-पंजाब सहकारी समिति सेवा नियम (1959)-नियम 33-ऐसा नियम, रजिस्ट्रार को अपने कर्मचारियों के खिलाफ एक सहकारी समिति द्वारा की गई अनुशासनात्मक कार्रवाई के खिलाफ अपील सुनने का अधिकार देता है-चाहे वह अधिनियम के अधिकार क्षेत्र से बाहर हो-सहकारी समिति का प्रबंधक-चाहे वह "वेतनभोगी सेवक" हो।पंजाब सहकारी समिति अधिनियम (XXV. of 1961)धारा 69-सहकारी समिति द्वारा अपने प्रबंधक को बर्खास्त करने का आदेश-रजिस्ट्रार द्वारा तय किए गए आदेश के खिलाफ अपील-ऐसे निर्णय के खिलाफ पुनरीक्षण याचिका-चाहे राज्य के पास हो) सरकार।

1

यह अभिनिर्धारित किया गया कि पंजाब सहकारी समिति अधिनियम, 1954 की धारा 50 के अधीन किसी सहकारी समिति के संविधान या कारबार को स्पर्श करने वाले किसी भी विवाद को स्वयं या उसके नामनिर्देशित द्वारा निर्णय के लिए पंजीयक को भेजा जा सकता है या यदि कोई भी पक्ष ऐसा चाहता है तो मध्यस्थता के लिए भेजा जा सकता है, सिवाय किसी सहकारी समिति या उसकी प्रबंध समिति द्वारा किसी सहकारी समिति के विरुद्ध की गई अनुशासनात्मक कार्रवाई से संबंधित विवाद के। समाज के वेतनभोगी सेवक। यह स्पष्ट है कि जब सोसायटी के किसी कर्मचारी की बर्खास्तगी सोसायटी द्वारा की गई अनुशासनात्मक कार्रवाई का परिणाम है, तो इस तरह के विवाद को धारा 50 के तहत रजिस्ट्रार के निर्णय के लिए संदर्भित नहीं किया जा सकता है। पंजाब सहकारी समिति नियम, 1956 के नियम 56 में यह उपबंध किया गया है कि किसी सोसाइटी या समितियों के वर्ग में, समिति के सदस्यों के अतिरिक्त, अधिकारियों की नियुक्ति, ऐसे निर्देशों के अधीन होगी जो रजिस्ट्रार, समय-समय पर, उनकी संख्या, योग्यता और सेवा की शर्तों के संबंध में जारी करे। इस नियम के बल पर, रजिस्ट्रार ने सेवा नियमों के रूप में निर्देश जारी किए। इन नियमों के नियम 36 के तहत, रजिस्ट्रार को अपने कर्मचारियों के खिलाफ की गई अनुशासनात्मक कार्रवाई के परिणामस्वरूप दंड लगाने वाले सहकारी समिति की प्रबंध समिति के आदेश के खिलाफ अपील पर निर्णय लेने का अधिकार दिया गया है। नियम का प्रभाव यह है कि एक ऐसा मामला जिसे अधिनियम की धारा 50 के तहत रजिस्ट्रार द्वारा कानूनी रूप से नहीं लिया जा सकता है और उस पर निर्णय नहीं लिया जा सकता है, इस नियम के तहत सुनवाई और निर्णय लिया जा सकता है। इस तरह की शक्ति का अनुमान नहीं लगाया जा सकता है और रजिस्ट्रार नियमों के नियम 56 के तहत निहित शक्ति का प्रयोग करते हुए निर्देश जारी करके इस तरह की शक्ति का उपयोग नहीं कर सकता है। यह अकल्पनीय है कि एक उपयुक्त प्राधिकारी जिसके पास किसी विशेष क़ानून के प्रावधानों के तहत किसी मामले को तय करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है, वह नियमों के तहत

ग्रहण की गई शक्ति की आड़ में इसका फैसला कर सकता है। किसी भी मामले में ऐसी शक्ति की धारणा क़ानून के उद्देश्य को रद्द कर देगी। इसके अलावा, नियम 56 कहीं भी रजिस्ट्रार को अपने किसी भी अधिकारी के खिलाफ प्रबंध समिति द्वारा की गई अनुशासनात्मक कार्रवाई से संबंधित मामले के संबंध में निर्देश जारी करने के लिए अधिकृत नहीं करता है और न ही यह रजिस्ट्रार को ऐसे आदेश तैयार करने के लिए अधिकृत करता है। अतः सेवा नियमों का नियम 36, जहाँ तक कि यह सोसायटी या इसकी प्रबंध समिति द्वारा की गई अनुशासनात्मक कार्रवाई के विरुद्ध अपीलों की सुनवाई करने के लिए पंजीयक को सशक्त करता है, अधिनियम के अधिकार क्षेत्र से बाहर है।
अभिनिर्धारित किया गया कि इसमें कोई संदेह नहीं है कि सहकारी समिति का प्रबंधक सोसाइटी का कर्मचारी होना अधिनियम की धारा 2 (ई) में दी गई 'अधिकारी' की परिभाषा के अंतर्गत आता है, लेकिन वह धारा 50 में दी गई 'वेतनभोगी सेवक' की श्रेणी में आता है। विधायिका ने "वेतनभोगी सेवक" शब्द का उपयोग करके उन व्यक्तियों के बीच अंतर करने का प्रयास किया है जिन्हें सोसायटी की निधि से भुगतान किया जाता है और राष्ट्रपति या अध्यक्ष जैसे व्यक्ति, जो अधिकारी होने के बावजूद किसी भी वेतन के हकदार नहीं हैं। धारा 50 में "वेतनभोगी सेवक" शब्दों का अर्थ है सोसाइटी के रोजगार में कोई भी व्यक्ति और इसकी निधियों से भुगतान किया गया और स्पष्ट रूप से सोसाइटी के प्रबंधक के मामले को शामिल करता है।
पंजाब सहकारी समिति अधिनियम, 1961 की धारा 69 उन मामलों में राज्य सरकार को पुनरीक्षण शक्तियां प्रदान करती है जहां अधिनियम की धारा 68 के तहत कोई अपील नहीं की जाती है और शक्ति का प्रयोग या तो स्वतः या किसी पक्ष के आवेदन पर किया जा सकता है। धारा के सरल पठन से, यह स्पष्ट है कि राज्य सरकार द्वारा स्वतः संज्ञान लिया जा सकता है या केवल एक पक्ष द्वारा एक संदर्भ के लिए दायर आवेदन पर कार्रवाई की जा सकती है। जब कोई सोसायटी अपने प्रबंधक को खारिज करके उसके खिलाफ अनुशासनात्मक कार्रवाई करती है और उसकी अपील का फैसला रजिस्ट्रार द्वारा किया जाता है, तो अधिनियम के तहत किसी भी प्राधिकरण को निर्णय के लिए किसी भी विवाद के संदर्भ का कोई सवाल ही नहीं है। अतः पंजीयक के निर्णय के विरुद्ध राज्य सरकार को कोई पुनरीक्षण करने का अधिकार नहीं है-जहां कार्यवाहियां व्यथित पक्ष के कहने पर आरंभ की जाती हैं, वहां राज्य सरकार को स्वप्रेरणा से कार्य करने वाला नहीं कहा जा सकता है अन्यथा उपयुक्त प्राधिकारी द्वारा स्वप्रेरणा से की गई कार्रवाई और व्यथित पक्ष के आवेदन पर की गई कार्रवाई में कोई अंतर नहीं रहेगा। विधायिका का इरादा कभी भी दोनों के साथ एक ही आधार पर व्यवहार करने का नहीं हो सकता है।
भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के अधीन याचिका में यह प्रार्थना की गई है कि मंत्री सहकारी समिति के दिनांक 8 अप्रैल, 1970 के आदेश को निरस्त करते हुए प्रमाणपत्र, निषेध, आदेश या किसी अन्य उपयुक्त रिट, आदेश या निर्देश की प्रकृति में एक रिट जारी किया जाए, जिसमें याचिकाकर्ता को सोसायटी के प्रबंधक के पद से वापस कर दिया जाए और आगे प्रार्थना की जाए कि रिट याचिका के लंबित निपटान के दौरान आक्षेपित आदेश के संचालन पर रोक लगाई जाए।
याचिकाकर्ताओं की ओर से सी. एल. लखनपाल और आई. एस. विमल अधिवक्ता हैं।
बी. एस. खोजी और गोबिंदर सिंह, अधिवक्ता, प्रत्यर्थी नं. 4.
राज्य उत्तरदाताओं और महाधिवक्ता, हरियाणा की ओर से आर. एन. मित्तल।
फैसला

न्यायालय का निर्णय इस प्रकार दिया गयाः-i जैन, जे -हमारा यह आदेश और निर्णय सिविल रिट नं. 1970 का 2232, हरदियाल सिंह, प्रबंधक, शाहाबाद फार्मर्स को-ऑपरेटिव मार्केटिंग-कम-प्रोसेसिंग सोसाइटी, लिमिटेड, शाहाबाद मारकंडा, जिला करनाल (जिसे इसके बाद सोसायटी कहा जाता है) द्वारा दायर किया गया और सिविल रिट नं। सोसायटी द्वारा अपने अध्यक्ष कानवरजीत सिंह ब्रैच के माध्यम से दायर 1970 का 2854, इन दोनों याचिकाओं में कानून और तथ्य के सामान्य प्रश्नों के रूप में उत्पन्न होता है। हरदियाल सिंह की याचिका से तथ्यों का वर्णन किया जा रहा है।

(2) सोसायटी पंजाब सहकारी समिति अधिनियम, 1961 के तहत एक पंजीकृत सोसायटी है। (hereinafter referred to as the Act). याचिकाकर्ता 23 नवंबर, 1959 को एक लेखाकार के रूप में सोसायटी की सेवा में शामिल हुआ। बाद में उन्हें प्रबंधक के पद पर पदोन्नत किया गया। रतनगढ़ गांव के शिवदेव सिंह ने याचिकाकर्ता के खिलाफ शिकायत की थी और उस शिकायत पर विचार करने के लिए 7 जनवरी, 1969 को सोसायटी की प्रबंध समिति की बैठक आयोजित की गई थी। उस बैठक में, संकल्प नं। निदेशक मंडल के 9, याचिकाकर्ता को स्टॉक की कमी और राशि के गबन के आरोप में निलंबित कर दिया गया था। याचिकाकर्ता को आरोप पत्र देने और उसके खिलाफ आरोपों की जांच करने के लिए एक उपसमिति का भी गठन किया गया था। यह कहा गया है कि निदेशक मंडल ने याचिकाकर्ता को सहकारी विपणन समितियों (इसके बाद नियमों के रूप में संदर्भित) के लिए सेवा नियमों के नियम 29 और 30 के तहत निलंबित कर दिया है जो निम्नलिखित शर्तों में हैंः -

"29-ए। समाज की सेवा में नियुक्त व्यक्ति को निम्नलिखित में से एक या अधिक दंड दिए जा सकते हैंः (i) चेतावनी; (ii) वेतनवृद्धि के साथ; (iii) वेतन में कमी; (iv) निलंबन और बर्खास्तगी।

30. सोसायटी की सेवा में किसी व्यक्ति को ऐसे मामलों में प्रबंध समिति द्वारा निलंबित किया जा सकता है जहां प्रथम दृष्टया बर्खास्तगी अंतिम सजा है।

(3) याचिका में कहा गया है कि निलंबन का यह आदेश कोई प्रारंभिक जांच किए बिना पारित किया गया था। हालाँकि, याचिकाकर्ता ने दिनांक 12 फरवरी, 1969 के आरोप पत्र में एक विस्तृत रिपोर्ट प्रस्तुत की। अंत में उप-समिति की रिपोर्ट पर, एक कारण बताओ नोटिस, दिनांकित! 16 जून, 1969 को रजिस्ट्रार, सहकारी समितियों, प्रत्यर्थी सं. 2. याचिकाकर्ता ने 3 जुलाई, 1969 को कारण बताओ नोटिस पर अपना जवाब प्रस्तुत किया। याचिकाकर्ता को अंततः प्रबंधक के रूप में सोसायटी की सेवा से बर्खास्त कर दिया गया-विस्तृत आदेश, दिनांक 5 जुलाई, 1969, प्रत्यर्थी नं। 2, जिसकी एक प्रति याचिका के साथ अनुलग्नक 'क' के रूप में संलग्न है। (उस आदेश से व्यथित महसूस करते हुए, याचिकाकर्ता ने नियमों के नियम 36 के तहत सहकारी समितियों के पंजीयक के समक्ष एक अपील दायर की, जिसकी सुनवाई संयुक्त पंजीयक ने की, जिसने इसे आंशिक रूप से स्वीकार कर लिया और याचिकाकर्ता को बहाल कर दिया और उस पर यह दंड लगाया कि उसकी चार वेतनवृद्धि को संचयी प्रभाव से रोक दिया जाए। याचिकाकर्ता के निलंबन की अवधि को ड्यूटी पर माना गया था, लेकिन उन्हें उस अवधि के लिए वेतन का केवल 50 प्रतिशत ही दिया गया था। संयुक्त पंजीयक के आदेश की एक वास्तविक प्रति याचिका के साथ एनीएक्स्योर 'बी' के रूप में संलग्न है\ संयुक्त पंजीयक के आदेश से असंतुष्ट सोसायटी ने अधिनियम की धारा 69 के तहत याचिका दायर की। उस याचिका की सुनवाई मंत्री ने की, जिन्होंने आंशिक रूप से इसकी अनुमति दी और आदेश दिया कि याचिकाकर्ता को प्रबंधक से किसी निम्न पद पर वापस भेज दिया जाए। मंत्री के आदेश की प्रति

याचिका के साथ अनुलग्नक 'ई' के रूप में संलग्न है। यह मंत्री के इस आदेश की वैधता है जिसे प्रबंधक हरदियाल सिंह ने चुनौती दी है।

(4) सोसाइटी द्वारा दायर याचिका में, मंत्री के साथ-साथ संयुक्त पंजीयक के आदेश (क्रमशः अनुलग्नक 'ई' और 'बी' की प्रतियां) की वैधता को चुनौती दी गई है क्योंकि सोसाइटी का हित यह देखना है कि प्रबंधक को बर्खास्त करने के उसके आदेश को बरकरार रखा जाए। ऊपर बताए गए तथ्यों से यह स्पष्ट है कि जहां तक मंत्री के आदेश का संबंध है, यह दोनों याचिकाकर्ताओं का सामान्य मामला है कि यह अवैध है, और रद्द करने योग्य है; लेकिन जहां तक संयुक्त पंजीयक के आदेश का संबंध है, इसकी वैधता को केवल सोसायटी द्वारा चुनौती दी गई है।

(5) याचिकाकर्ता के विद्वान वकील श्री सी. एल. लखनपाल द्वारा यह तर्क दिया गया था कि मंत्री के समक्ष अधिनियम की धारा 69 के तहत कोई संशोधन नहीं किया गया था और यह कि विवादित आदेश अधिकार क्षेत्र से बाहर था। विद्वान वकील के इस तर्क को सोसायटी के विद्वान वकील श्री खोजी ने भी अपनाया था। पूरे मामले पर विचारपूर्वक विचार करने के बाद, हमारा विचार है कि विद्वान वकील के इस तर्क में काफी बल है। अधिनियम की धारा 69, जिसके तहत पुनरीक्षण दायर किया गया था, निम्नलिखित शर्तों में हैः - मैं 69. पुनरीक्षण -पारित किए गए किसी निर्णय या आदेश की वैधता और औचित्य के बारे में स्वयं को संतुष्ट करने के उद्देश्य से सरकार स्वतः या किसी पक्ष के आवेदन पर किसी ऐसी कार्यवाही के अभिलेख की मांग और जांच कर सकती है जिसमें धारा 68 के तहत सरकार को कोई अपील नहीं की गई हो और यदि किसी भी मामले में सरकार को ऐसा प्रतीत होता है कि ऐसे किसी निर्णय या आदेश को संशोधित, निरस्त या संशोधित किया जाना चाहिए, तो सरकार उस पर ऐसा आदेश पारित कर सकती है जो वह उचित समझे।

यह धारा उन मामलों में राज्य सरकार को पुनरीक्षण शक्तियां प्रदान करती है जहां अधिनियम की धारा 68 के तहत कोई अपील नहीं की जाती है और शक्ति का प्रयोग या तो स्वतः या किसी संदर्भ के लिए किसी पक्ष के आवेदन पर किया जा सकता है। इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि राज्य सरकार ने स्वतः संज्ञान लेते हुए कार्रवाई नहीं की, बल्कि प्रबंधक के आवेदन पर विवादित आदेश पारित किया। इस धारा के सादे पठन से यह स्पष्ट है कि ऐसा आवेदन केवल एक पक्ष द्वारा एक संदर्भ के लिए दायर किया जा सकता है। मैं * तत्काल मामला, स्वीकार करता हूं कि अधिनियम के तहत किसी भी प्राधिकरण को निर्णय के लिए किसी भी विवाद के संदर्भ का कोई सवाल ही नहीं था। सोसायटी या प्रबंधक इस तरह के किसी भी संदर्भ में पक्षकार नहीं थे। यह एक साधारण मामला था जिसमें याचिकाकर्ता सोसायटी ने प्रबंधक (याचिकाकर्ता) के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्रवाई की, जिसने नियमों के नियम 36 के तहत अपील दायर की थी, जिस पर संयुक्त पंजीयक ने 5 मार्च, 1970 को एक आदेश पारित किया था (याचिका के लिए अनुलग्नक 'बी' की प्रतिलिपि)

(6) आक्षेपित आदेश का समर्थन करने के प्रयास में, राज्य के विद्वान वकील श्री मित्तल द्वारा यह तर्क दिया गया था कि आक्षेपित आदेश रद्द करने के लिए उत्तरदायी नहीं था क्योंकि इसे राज्य की स्वतः संज्ञान शक्तियों का प्रयोग करते हुए पारित किया गया माना जाना चाहिए। हम विद्वान वकील से सहमत होने में असमर्थ हैं क्योंकि अधिनियम की धारा 69 के तहत सोसायटी द्वारा दायर संशोधन पर आक्षेपित आदेश पारित किया गया है। किसी सदस्य या पूर्व सदस्य के माध्यम से या इस प्रकार का दावा करने वाले सदस्यों या पूर्व सदस्यों या व्यक्तियों के बीच या सोसायटी के पूर्व या वर्तमान के किसी अधिकारी, अभिकर्ता या सेवक या सोसाइटी के परिसमापक या सोसाइटी या उसकी समिति के बीच और किसी अधिकारी, अभिकर्ता, सदस्य या सोसाइटी के पूर्व या वर्तमान के सेवक और

सोसाइटी के परिसमापक या दो पंजीकृत सोसाइटियों के बीच या किसी अन्य सोसाइटी के परिसमापक और परिसमापक के बीच या विभिन्न सोसाइटियों के परिसमापकों के बीच कार्यवाही शुरू की गई थी, इसे सभी संबंधित पक्षों को निर्धारित तरीके से उचित सूचना के बाद स्वयं या उनके नामित व्यक्ति द्वारा निर्णय के लिए रजिस्ट्रार को भेजा जाएगा या यदि दोनों में से कोई भी पक्ष ऐसा चाहता है, तो तीन मध्यस्थों के मध्यस्थता के लिए, जो रजिस्ट्रार या उसका नामित व्यक्ति होगा और दो व्यक्ति जिनमें से प्रत्येक को संबंधित पक्षों द्वारा नामित किया जाएगा। यदि कोई पक्षकार किसी मध्यस्थ को नामित करने में विफल रहता है तो नियत सूचना की तामील के एक माह के भीतर रजिस्ट्रार के पास ऐसा करने की शक्ति होगी जैसा कि आदेश के प्रारंभिक भाग से स्पष्ट होता है, जिसमें यह इस प्रकार कहा गया हैः-"यह पंजाब की धारा 69 के अधीन पुनरीक्षण याचिका है। सहकारी समिति अधिनियम, l9t> l, संयुक्त रजिस्ट्रार, सहकारी समिति, हरियाणा, चंडीगढ़ के दिनांक 5 मार्च, 1970 के आदेश के विरुद्ध श्री कंवरजीत सिंह, शाहाबाद फार्मर्स को-ऑपरेटिव मार्केटिंग-कम-प्रोसेसिंग सोसाइटी लिमिटेड, शाहाबाद मार्कंडा के अध्यक्ष द्वारा दायर किया गया है।"

विवादित आदेश में कहीं भी यह नहीं कहा गया है कि कार्रवाई स्वतः ही की जा रही थी। यदि हम राज्य के विद्वान वकील के तर्क को स्वीकार करते हैं, तो एक उपयुक्त प्राधिकारी द्वारा स्वतः संज्ञान लेते हुए की गई कार्रवाई और एक पीड़ित पक्ष के आवेदन पर की गई कार्रवाई में कोई अंतर नहीं रहेगा। यह कभी भी विधायिका का इरादा नहीं हो सकता कि दोनों के साथ एक ही आधार पर व्यवहार किया जाए। इस प्रकार हमारा यह सुविचारित मत है कि संयुक्त पंजीयक के दिनांक 5 मार्च, 1970 के आदेश के विरुद्ध राज्य सरकार को अधिनियम की धारा 69 के अधीन कोई पुनरीक्षण नहीं किया गया है और यह कि मंत्री का आक्षेपित आदेश स्पष्ट रूप से अधिकार क्षेत्र से बाहर है। परिणाम यह है कि हरदियाल सिंह द्वारा दायर याचिका को अनुमति दी जानी चाहिए।

(9) नियम 56 द्वारा दी गई शक्तियों का प्रयोग करते हुए, रजिस्ट्रार ने निर्देशों के रूप में सेवा नियम बनाए, जैसा कि ज्ञापन से स्पष्ट है, जो "सहकारी विभाग के परिपत्रों की एक पुस्तिका, खंड III" नामक पुस्तक के पृष्ठ 34 पर दिखाई देता है और निम्नानुसार पढ़ता हैः "" नहीं। 57/मार्क/6274-डी 2/आर. सी. एस., दिनांक 9 फरवरी, 1959/20 माघा, 1880 शक।

श्री एस एस पुरी, Z.A.S., रजिस्ट्रार, सहकारी समितियाँ, पंजाब, जालंधर से।

राज्य में सहकारी विपणन समितियों के सभी अध्यक्ष (arf phr iist enclosed).

विषय-सहकारी विपणन समितियों के कर्मचारियों के लिए सेवा नियम।

ज्ञापन.

पंजाब सहकारी समिति अधिनियम, 1955 की धारा 60 के अधीन बनाए गए अधिसूचित नियम के नियम 56 में कहा गया है कि किसी सोसाइटी या सोसाइटी के किसी वर्ग में समिति के सदस्यों के अतिरिक्त अन्य अधिकारियों की नियुक्ति ऐसे निर्देशों के अधीन होगी जो रजिस्ट्रार समय-समय पर उनकी संख्या, योग्यता और सेवा की शर्तों के संबंध में जारी करे।

इस नियम के प्रावधानों के अनुसार सहकारी विपणन समितियों के कर्मचारियों के लिए मसौदा नियम इस कार्यालय में तैयार किए गए थे और आपको आपूर्ति की गई थी,-इस कार्यालय के माध्यम से मेमो। नं. 57/मार्क/6135-डी2/आरसीएस, दिनांक 23 जनवरी, 1959 को विपणन समितियों के प्रतिनिधियों की बैठक में विचार के लिए, 3 फरवरी, 1959 को।

ऊपर उल्लिखित बैठक में हुई चर्चाओं के आलोक में बनाए गए नियमों की एक प्रति संलग्न है। चूंकि ये नियम ऊपर निर्दिष्ट अधिसूचित नियमों के अनुसार बनाए गए हैं, इसलिए वे इस कार्यालय ज्ञापन में जारी किए गए नियम 21-28 के दमन में तुरंत लागू हो जाएंगे। नं. 711/आरसीएस, दिनांक 1 जुलाई, 1957. यह अनुरोध किया जाता है कि यह सुनिश्चित करने के लिए तत्काल कार्रवाई की जाए कि इन नियमों पर आपकी सोसायटी की प्रबंध समिति द्वारा कार्रवाई की जाए।

(एसडी.) .. .. ., एस. एस. पुरी, रजिस्ट्रार, सहकारी समितियाँ, पंजाब, जालंधर।

सेवा नियमों में, प्रासंगिक नियम 36 है, जो इस प्रकार हैः —

I

"36. एक पुष्ट कर्मचारी, जिसे प्रबंध समिति द्वारा दंडित किया गया है, सजा के आदेश के संचार की तारीख से दो महीने के भीतर रजिस्ट्रार के पास अपील कर सकता है। पंजीयक का निर्णय अंतिम होगा और दोनों पक्षों के लिए बाध्यकारी होगा।

(10) याचिकाकर्ता के विद्वान वकील श्री खोजी द्वारा उठाए गए तर्कों पर विचार करने के बाद, ऊपर पुनः प्रस्तुत किए गए वैधानिक प्रावधानों के आलोक में, हम पाते हैं कि इन तर्कों में काफी बल है। पुराने अधिनियम की धारा 50 के अधीन, सोसायटी के संविधान या कारबार को स्पर्श करने वाले किसी भी विवाद को स्वयं या उसके नामनिर्देशित द्वारा निर्णय के लिए रजिस्ट्रार के पास भेजा जा सकता है या यदि कोई भी पक्ष ऐसा चाहता है तो मध्यस्थता के लिए भेजा जा सकता है, सिवाय उस विवाद के जो सोसायटी या उसकी प्रबंध समिति द्वारा सोसाइटी के किसी वेतनभोगी सेवक के विरुद्ध की गई अनुशासनात्मक कार्रवाई से संबंधित है। प्रबंधक हरदियाल सिंह की बर्खास्तगी सोसायटी द्वारा की गई अनुशासनात्मक कार्रवाई का परिणाम थी और पुराने अधिनियम की धारा 50 के तहत इस तरह के विवाद को रजिस्ट्रार के निर्णय के लिए संदर्भित नहीं किया जा सकता था। नियम बनाने की शक्ति का प्रयोग करते हुए बनाए गए नियम 56 में यह उपबंध है कि किसी सोसाइटी या सोसाइटी के वर्ग में, समिति के सदस्यों के अलावा अन्य अधिकारियों की नियुक्ति ऐसे निर्देशों के अधीन होगी जो रजिस्ट्रार समय-समय पर उनकी संख्या, योग्यता और सेवा की शर्तों के संबंध में जारी करे। इस नियम के बल पर, रजिस्ट्रार ने सेवा नियमों के रूप में निर्देश जारी किए और नियम 36 के तहत खुद को सजा के आदेश के खिलाफ अपील की सुनवाई की शक्ति के साथ निवेश किया, जिसे एक पुष्ट कर्मचारी के खिलाफ प्रबंध समिति द्वारा पारित किया जा सकता है। इस नियम में आगे यह प्रावधान किया गया है कि पंजीयक का निर्णय अंतिम होगा और दोनों पक्षों के लिए बाध्यकारी होगा। सेवा नियमों के नियम 29 में दंड का प्रावधान किया गया है, जो इस प्रकार हैः -

"29. समाज की सेवा के लिए नियुक्त व्यक्ति को निम्नलिखित में से एक या अधिक प्रकाशन दिए जा सकते हैंः-(i) चेतावनी।

(ii) वेतनवृद्धि को रोके रखना।

(iii) वेतन में कमी।

(iv) निलंबन।

(v) बर्खास्तगी "।

इस प्रकार नियम 36 के अधीन, पंजीयक को ऊपर पुनरुत्पादित नियम 29 में निर्दिष्ट किसी भी दंड को अधिरोपित करने वाली प्रबंध समिति के आदेश के विरुद्ध अपील पर निर्णय लेने का अधिकार दिया गया है, और उसका निर्णय

अंतिम बना दिया गया है। इस नियम का प्रभाव यह होगा कि एक ऐसा मामला जिसे पुराने अधिनियम की धारा 50 के तहत रजिस्ट्रार द्वारा कानूनी रूप से नहीं लिया जा सकता था और उस पर निर्णय नहीं लिया जा सकता था, इस नियम के तहत सुनवाई और निर्णय लिया जा सकता था। हमारे विचार में, ऐसी शक्ति ग्रहण नहीं की जा सकती थी, और रजिस्ट्रार नियमों के नियम 56 के तहत निहित शक्ति का प्रयोग करते हुए निर्देश जारी करके इस तरह की शक्ति का उपयोग नहीं कर सकता था। यह अकल्पनीय है कि एक उपयुक्त प्राधिकारी जिसके पास किसी विशेष क़ानून के प्रावधानों के तहत किसी मामले को तय करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है, वह नियमों के तहत ग्रहण की गई शक्ति की आड़ में इसका फैसला कर सकता है। किसी भी मामले में ऐसी शक्ति की धारणा क़ानून के उद्देश्य को रद्द कर देगी। कुछ इसी तरह का प्रश्न पटना उच्च न्यायालय के समक्ष रतन एन. टाटा और एक अन्य बनाम कैप्टन टाटा मामले में विचार के लिए सामने आया। एस. बी. माथुर और अन्य (1). उस मामले में तथ्य यह थे कि कैप्टन। एस. बी. माथुर, जो जमशेदपुर को-ऑपरेटिव फ्लाइंग क्लब के मुख्य पायलट प्रशिक्षक के रूप में कार्यरत थे, को कुछ आरोपों का दोषी पाया गया और उन्हें प्रबंध समिति के एक आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया। कैप्टन। माथुर ने रजिस्ट्रार, सहकारी समितियों, बिहार को एक आवेदन दिया, जिसमें प्रार्थना की गई कि बर्खास्तगी के आदेश को दरकिनार कर दिया जाए। फ्लाइंग क्लब ने रजिस्ट्रार के अधिकार क्षेत्र को उसके द्वारा की गई अनुशासनात्मक कार्रवाई की प्रकृति के विवाद पर विचार करने और निर्णय लेने के लिए चुनौती दी। रजिस्ट्रार ने 27 नवंबर, 1967 के अपने आदेश में कहा कि बिहार और उड़ीसा सहकारी समिति नियम, 1959 के नियम 15 और बिहार और उड़ीसा सहकारी समिति अधिनियम, 1935 की धारा 66, जिसे नियमों के नियम 33 के साथ पढ़ा जाता है, ने रजिस्ट्रार को कैप्टन अमरिंदर सिंह द्वारा दायर आवेदन पर विचार करने के लिए आवश्यक शक्तियां प्रदान कीं। माथुर उसके सामने। उक्त आदेश के विरुद्ध, मामला उच्च न्यायालय के समक्ष उठाया गया था और उस मामले में निर्धारण के लिए एकमात्र प्रश्न यह था कि क्या रजिस्ट्रार के पास कैप्टन द्वारा दायर आवेदन पर विचार करने की शक्तियां या अधिकार क्षेत्र था। माथुर। अधिनियम की धारा 48, जो रजिस्ट्रार को विवादों के संदर्भ का प्रावधान करती है, कमोबेश अधिनियम की धारा 50 के समान ही है। यह पक्षकारों का एक स्वीकृत मामला था कि विवाद को अधिनियम की धारा 48 के तहत पंजीयक को नहीं भेजा जा सकता था। हालांकि, कैप्टन के वकील। माथुर ने प्रस्तुत किया कि विवाद को उपनियमों के उपनियम 26 या 34 के तहत और अधिनियम की धारा 11 के तहत संदर्भित किया जा सकता है; लेकिन उस विवाद को विद्वान न्यायाधीशों द्वारा खारिज कर दिया गया था और कानून के प्रासंगिक प्रावधानों पर विचार करने के बाद यह देखा गया था कि इस तर्क को स्वीकार करना मुश्किल था कि अधिनियम की धारा 48 द्वारा स्पष्ट रूप से बहिष्कृत शक्ति को या तो नियमों के नियम 33 के तहत या सोसायटी द्वारा बनाए गए उपनियमों के उपनियम 26 या 34 द्वारा रजिस्ट्रार को प्रदान किया गया है। आगे यह अभिनिर्धारित किया गया कि कैप्टन. माथुर को प्रबंध समिति या क्लब द्वारा उनकी बर्खास्तगी के मामले में 1 रजिस्ट्रार को सूचित करने का कोई अधिकार नहीं था और रजिस्ट्रार के पास उनके आवेदन पर विचार करने और विवाद का फैसला करने का कोई अधिकार नहीं था। हम पटना उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीशों द्वारा लिए गए दृष्टिकोण से पूरी तरह सहमत हैं, जो पूरी तरह से मामले के तथ्यों पर लागू होता है।

(11) इसके अतिरिक्त, हम पाते हैं कि नियम 56 में यह उपबंध है कि किसी सोसायटी या समितियों के वर्ग में समिति के सदस्यों के अतिरिक्त अन्य अधिकारियों की नियुक्ति ऐसे निर्देशों के अधीन होगी जो कुलसचिव समय-समय पर उनकी संख्या, योग्यता और सेवा की शर्तों के संबंध में जारी करे। यह कहीं भी रजिस्ट्रार को अपने

किसी भी अधिकारी के खिलाफ प्रबंध समिति द्वारा की गई अनुशासनात्मक कार्रवाई से संबंधित मामले के संबंध में निर्देश जारी करने के लिए अधिकृत नहीं करता है और न ही यह रजिस्ट्रार को ऐसे आदेश तैयार करने के लिए अधिकृत करता है। इस स्थिति में, इस आधार पर भी, यह मानना मुश्किल है कि रजिस्ट्रार नियम 56 के तहत, नियम 36 के रूप में निर्देश जारी कर सकता है, जो सोसायटी या इसकी प्रबंध समिति द्वारा की गई अनुशासनात्मक कार्रवाई के खिलाफ अपील सुनने और अपने आदेश को अंतिम बनाने के लिए खुद को सशक्त कर सकता है। (12) सामना करना पड़ा! इस स्थिति में श्री लखनपाल ने यह तर्क दिया कि आक्षेपित आदेश की वैधता का परीक्षण करने के लिए, पुराने अधिनियम की धारा 50 का उल्लेख करना आवश्यक नहीं था क्योंकि यह इस मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होता था। विद्वान वकील के अनुसार, धारा 50 के तहत रजिस्ट्रार द्वारा प्रयोग की जाने वाली शक्ति और नियमों के तहत उसमें निहित शक्तियों के आधार पर विभाग के प्रमुख के रूप में उसके द्वारा प्रयोग की जाने वाली शक्ति के बीच अंतर किया जाना था, ताकि सोसाइटी के उचित कामकाज को देखा जा सके और पीड़ित व्यक्तियों को सोसाइटी द्वारा पारित किए जाने वाले मनमाने आदेशों के प्रभाव से मुक्त किया जा सके। वस्तुतः, विद्वान वकील का तर्क था कि आक्षेपित आदेश रजिस्ट्रार द्वारा स्तरीय विभाग के प्रमुख के रूप में पारित किया गया था और इस तरह की शक्ति का उपयोग वह नियमों के तहत कानूनी रूप से कर सकता था।

जैसा कि पहले देखा गया है, एक प्राधिकरण जो अधिनियम के तहत किसी मामले को तय करने के लिए सशक्त नहीं है, वह नियमों की आड़ में उस मामले को तय करने की शक्ति ग्रहण नहीं कर सकता है। नियम एक ऐसे अधिकार के साथ एक प्राधिकरण का निवेश नहीं कर सकते हैं जिसकी अधिनियम अनुमति नहीं देता है। यदि ऐसी शक्ति की परिकल्पना की गई है, तो प्रभाव यह होगा कि अनुशासनात्मक कार्रवाई के मामले में पंजीयक की अधिकारिता को छीनने वाले मुख्य अधिनियम के प्रावधान निरर्थक हो जाएंगे।

(13) श्री लखनपाल द्वारा इसके पश्चात् यह प्रतिवाद किया गया कि धारा 55 के अधीन पंजाब सहकारी समिति अधिनियम, 1961 (जिसे इसके पश्चात् नया अधिनियम कहा गया है) के प्रवर्तन के पश्चात्, अनुशासनात्मक कार्रवाई से संबंधित कोई मामला भी मध्यस्थता के लिए पंजीयक को निर्दिष्ट किया जा सकता है कि धारा 86 के अधीन, जो एक निरसन और बचत धारा है, निरसित अधिनियम (पुराना अधिनियम) के अधीन की गई कोई बात या की गई कोई कार्रवाई, नए अधिनियम के अनुरूप होने की सीमा तक, नए अधिनियम के अधीन की गई या की गई समझी जाएगी और यह कि आक्षेपित आदेश धारा 55 के अनुरूप होने पर, कानूनी और उचित समझा जाएगा। उनके इस तर्क के समर्थन में कि आक्षेपित आदेश नए अधिनियम और उसके तहत नियमों के प्रावधानों के अनुरूप है, सहकारी समिति नियम, 1963 (इसके बाद नए नियम के रूप में संदर्भित) के नियम 45 और 81 का भी संदर्भ दिया गया था। उक्त नियम निम्नलिखित शब्दों में हैंः-"45. व्यवसाय के सफल संचालन के लिए रजिस्ट्रार द्वारा निर्देशः-रजिस्ट्रार समय-समय पर ऐसे निर्देश जारी कर सकता है जो वह किसी सहकारी समिति या सहकारी समितियों के वर्ग के व्यवसाय के सफल संचालन के लिए आवश्यक समझता है।81. निरसनः-पंजाब सहकारी समिति नियम, 1956, एतद्द्वारा निरसित किए जाते हैंः-बशर्ते कि इसके द्वारा निरसित नियमों के उपबंधों के अधीन की गई कोई कार्रवाई, जारी किया गया आदेश, उपविधि, जहां तक इन नियमों के उपबंधों के साथ असंगत नहीं है, इन नियमों के उपबंधों के अधीन की गई या की गई समझी जाएगी।

दूसरी ओर, श्री. खोजी, विद्वान वकील ने तर्क दिया कि नए अधिनियम की धारा 55 के तहत भी, अनुशासनात्मक कार्रवाई से संबंधित मामले को मध्यस्थता के लिए संदर्भित नहीं किया जा सकता है और पीड़ित पक्ष के लिए

उपलब्ध एकमात्र उपाय या तो हर्जाने के लिए दीवानी मुकदमा दायर करना या औद्योगिक विवाद अधिनियम के तहत निर्णय के लिए मामले को संदर्भित करना था। अपने तर्क के समर्थन में, विद्वान वकील ने सहकारी सेंट्रल बैंक लिमिटेड और अन्य बनाम अतिरिक्त औद्योगिक न्यायाधिकरण, आंध्र प्रदेश (2) और डॉ. एस. दत्त बनाम दिल्ली विश्वविद्यालय पर निर्भरता रखी। (3). हमारे विचार में, यह बिल्कुल भी आवश्यक नहीं है कि मामले के इस पहलू का विज्ञापन किया जाए और गुण-दोष के आधार पर उस कार्रवाई से निपटा जाए जो अपनी शुरुआत से ही अवैध और शून्य थी, जिसे निरसन अधिनियम द्वारा नहीं बचाया जा सकता है। नया अधिनियम पुराने अधिनियम या नियमों के तहत की गई कार्रवाई को बचा सकता है यदि यह कानूनी और वैध था। इस दृष्टिकोण से हमने यह लिया है कि नियम के तहत रजिस्ट्रार इस तरह की शक्ति के साथ खुद को निवेश नहीं कर सकता है, नए अधिनियम के प्रावधानों के तहत उस कार्रवाई को बचाने का सवाल ही पैदा नहीं होता है। इसके अलावा हमें यह तय करने के लिए नहीं कहा जाता है कि नए अधिनियम के प्रावधानों के तहत, इस तरह के मामले को रजिस्ट्रार के मध्यस्थता के लिए भेजा जा सकता है या नहीं।

(14) इसके बाद प्रत्यर्थियों के विद्वान वकील श्री लखनपाल द्वारा यह तर्क दिया गया कि नियम 36 को सोसायटी द्वारा अपने उपनियम के रूप में अपनाया गया था और इस प्रकार रजिस्ट्रार द्वारा उन उपनियमों के तहत शक्ति का प्रयोग किया गया है, जो सोसाइटी पर बाध्यकारी थे। विद्वान वकील का यह तर्क काल्पनिक है और इसका कोई आधार नहीं है। उपनियमों को यह दिखाने के लिए प्रस्तुत नहीं किया गया है कि ऐसा अधिकार पंजीयक को दिया गया है। विद्वान वकील का तर्क अप्रमाणित रहता है और खारिज कर दिया जाता है

(15) उत्तरदाताओं के विद्वत वकील द्वारा अंत में यह तर्क दिया गया कि धारा 50 के तहत, सोसाइटी या उसकी प्रबंध समिति द्वारा सोसाइटी के वेतनभोगी सेवक के खिलाफ की गई अनुशासनात्मक कार्रवाई के संबंध में विवाद को निर्णय के लिए रजिस्ट्रार को नहीं भेजा जा सकता है। विद्वान वकील के अनुसार, प्रबंधक सोसायटी का वेतनभोगी सेवक नहीं था और उसका अधिकारी था और इस प्रकार उसके खिलाफ की गई अनुशासनात्मक कार्रवाई से संबंधित मामले को पुराने अधिनियम के तहत भी निर्णय के लिए रजिस्ट्रार को भेजा जा सकता था और नियम 36 के तहत रजिस्ट्रार कानूनी रूप से विवादित आदेश पारित कर सकता था। हम विद्वान वकील से सहमत होने में असमर्थ हैं। पुराने अधिनियम की धारा 2 (ई) में दी गई 'अधिकारी' की परिभाषा इस प्रकार हैः 'अधिकारी' में एक अध्यक्ष, अध्यक्ष, सचिव, कोषाध्यक्ष, समिति का सदस्य, कर्मचारी या कोई अन्य व्यक्ति शामिल है जो पंजीकृत सोसायटी के व्यवसाय के संबंध में निर्देश देने के लिए नियमों या उपनियमों के तहत सशक्त है।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि प्रत्यर्थी एक कर्मचारी होने के नाते इस परिभाषा में आता है और सोसाइटी का एक अधिकारी है; लेकिन हम खुद को यह मानने के लिए राजी नहीं कर पाए हैं कि प्रत्यर्थी सोसाइटी का अधिकारी होने के नाते वेतनभोगी सेवकों की श्रेणी में नहीं आएगा। हमारे सामने यह विवादित नहीं था कि प्रत्यर्थी सोसायटी का कर्मचारी था और उसे सोसाइटी की निधि से उसका वेतन दिया जाता था। विधायिका ने "वेतनभोगी सेवक" शब्द का उपयोग करके उन व्यक्तियों के बीच अंतर करने का प्रयास किया है, जिन्हें सोसायटी की निधि से भुगतान किया जाता है और राष्ट्रपति या अध्यक्ष जैसे व्यक्ति, जो अधिकारी होने के बावजूद किसी भी वेतन के हकदार नहीं हैं। धारा 50 में "वेतनभोगी सेवक" शब्द का अर्थ सोसायटी के रोजगार में कोई भी व्यक्ति है और इसकी निधियों से भुगतान किया गया है और स्पष्ट रूप से उत्तरदाताओं के मामले को शामिल करता है। विवाद, हालांकि सरल है, बल से रहित है और खारिज कर दिया जाता है।

(16) उपर्युक्त चर्चा के परिणामस्वरूप, हम पाते हैं कि सेवा नियमों का नियम 36, जहां तक यह रजिस्ट्रार को सोसायटी या इसकी प्रबंध समिति द्वारा की गई अनुशासनात्मक कार्रवाई के खिलाफ अपील सुनने का अधिकार देता है, अधिकार से बाहर है। नतीजतन, पंजीयक का दिनांक 5 मार्च, 1970 का आक्षेपित आदेश (अनुलग्नक 'ख' की प्रतिलिपि) अवैध और अधिकार क्षेत्र से बाहर है।

(17) ऊपर दर्ज किए गए कारणों के लिए, सिविल राइट्स सं। 1970 का 2232 और 2854 अनुज्ञात हैं और मंत्री और पंजीयक के दिनांक 8 अप्रैल, 1970 और 5 मार्च, 1970 के आदेश (अनुलग्नक 'ई' और 'बी' की प्रतियां) रद्द कर दिए गए हैं, जिसमें लागत के बारे में कोई आदेश नहीं है।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और कि सी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

पीयूष चौधरी
प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी
(Trainee Judicial Officer)
जगाधरी, हरियाणा